विचार बिन्दु

धीरज सारे आनंदों और शक्तियों का मूल है। –फ्रैंकलिन

समकालीन भारत में संस्कृति बनाम पहचान की राजनीति

मेरी पीढ़ी के लोगों के लिए विविधता भारत का पर्याय रही है। हमने भारत को जाना-समझा ही विविधता के माध्यम से है। लेकिन आज यह शब्द दुर्बोध होता जा रहा है। आज इसके माध्यम से भारत को समझ पाना उतना सहज नहीं रह गया है। मेरे भारत में विविधता केवल सह अस्तित्व की ही नहीं, सह निर्माण की भी सतत प्रक्रिया रही है। यहां विविध संस्कृतियां टकराई भी, घुलीं-मिली भी और फिर एक दूसरे में समाविष्ट होकर एक बहुरंगी संरचना बन गई। उसी को तो हम भारतीय संस्कृति कहते रहे हैं। लेकिन आज का भारत एक अजीब-सी विडंबना के दौर से गुज़र रहा है। आज विविधता को कई तरह से नकारा जा रहा है। संस्कृति बचाने के नाम पर उसे संकीर्ण किया जा रहा है और पहचान की राजनीति को उस पर कुछ ऐसे थोपा जा रहा है कि वह अपने मूल स्वभाव -संवाद, समावेश और प्रवाह- से दूर होती जा रही है।

यह बात सर्वमान्य है कि संस्कृति चलायमान होती है। उसका स्वभाव स्थिरता है ही नहीं। वह समय और स्थितियों के अनुसार बदलती रहती है। वह नए प्रभावों को आत्मसात करती है और इस प्रक्रिया में पुराने को नए संदर्भों में पुनर्परिभाषित करती है। भारतीय संस्कृति इसी तरह बनी है। भाषाओं, परंपराओं,खान-पान, विश्वासों और रीति-रिवाज़ों के अनगिनत स्त्रोतों ने उसे गढ़ा है। लेकिन आज पहचान की जो राजनीति अत्यधिक मुखर है वह इस वैविध्य को नकार कर स्पष्ट सीमा रेखाएं खींच देने को व्याकुल है। आज हम' और 'वे' के बीच के अंतर को धार दी जा रही है और ऐसा करने के क्रम में संस्कृति की उस नमनीयता को ही नष्ट किया जा रहा है जो उसे जीवंत बनाती है। इस बात को समझा जाना बहुत ज़रूरी है कि जब संस्कृति को किसी एक पहचान के सांचे में ढालने की कोशिश होती है तो वहअपनी सजीवता खोने लगती है।

आज के भारत में यह द्वंद्व किसी सैद्धांतिक विमर्श का विषय न रहकर रोज़मर्रा का यथार्थ बन चुका है। इतिहास के पुनर्पाठ की प्रवृत्ति बहुत तेज़ हुई है। शहरों, संस्थानों और सड़कों के नाम बदले जा रहे हैं। ऐसा केवल प्रशासनिक और सांस्कृतिक कारणों से नहीं किया जा रहा है। बहुत आसानी से समझा जा सकता है कि यह सब स्मृति और इतिहास को एक ख़ास दिशा देने के निमित्त किया जा रहा है। इतिहास की समीक्षा एक सतत ज़ारी रहने वाली प्रक्रिया होती है। हर जीवित समाज ऐसा करता है। उसे करना भी चाहिए। उससे भला किसी को भी आपत्ति क्यों होगी? लेकिन जब इतिहास की समीक्षा एक ख़ास मक़सद को सामने रखकर की जाए, एक ख़ास पहचान को प्रमुखता देने के लिए की जाए, और एक ख़ास पहचान को धूमिल करने के लिए की जाए, तो चिंता होना स्वाभाविक है। जब अतीत को वर्तमान की राजनीति के अनुरूप ढालने के प्रयास होते हैं तो फिर वह इतिहास इतिहास न रहकर नैरेटिव बन जाता है। दुर्भाग्य से आज हमारे सामने यही हो रहा है।

हम देख रहे हैं कि हमारे त्योहारों और सांस्कृतिक प्रतीकों के इर्द-गिर्द भी एक नई तरह की आक्रामक प्रतिस्पर्धा निर्मित की जा रही है। सार्वजनिक स्थानों पर भी कौन-सा उत्सव कैसे मनाया जाएगा, और किस धार्मिक कृत्य की अभिव्यक्ति तो 'संस्कृति' है और किसकी अभिव्यक्ति 'अतिक्रमण' है – ये बातें अब ज़्यादा उछाली जाने लगी हैं। अनेक जगहों पर धार्मिक जुलूसों और आयोजनों को लेकर तनाव होने लगे हैं और अब ये सब सहभागिता और आनंद के माध्यम न रहकर शक्ति प्रदर्शन और सीमा निर्धारण के उपकरण बनते या बनाए जा रहे हैं। संस्कृति मूलत: तो उत्सवधर्मी और समावेशी ही होती है लेकिन उसे प्रतिस्पर्धा के मंच में तब्दील करके उसकी मूल प्रकृति को ही बदला जा रहा है।

और ऐसा ही खान-पान के मामले में भी हो रहा है। खान-पान किसी भी संस्कृति का सर्वाधिक सहज और निजी पक्ष होता है, लेकिन अब इसे राजनीतिक आग्रह और सार्वजनिक बहस का विषय बना दिया गया है। कौन क्या खा-पी रहा है, अब यह उसके व्यक्तिगत चयन कामामला नहीं रह गया है। इससे उसकी पहचान रेखांकित होने लगी है। भोजन की थाली, जो कभी स्वाद, आनंद और क्षेत्रीय विविधता का प्रतीक मानी जाती थी, अब वैचारिक निष्ठा और धार्मिक पहचान का प्रमाण पत्र बना दी गई है। यह प्रवृत्ति व्यक्तिगत स्वतंत्रता को तो सीमित करती ही है, उस सांस्कृतिक बहुलता को भी आहत करती है जिसने भारतीय समाज को सदियों से जीवंत बनाए रखा है।

इस समूचे द्वंद्व से सर्वाधिक प्रभावित हो रही है भारत की युवा पीढ़ी। भारत की करीब पैंसठ प्रतिशत आबादी पैंतीस वर्ष से कम आयु वाली है और यही समूह सोशल मीडिया और समकालीन विमर्श से सबसे अधिक प्रभावित है। जो युवा परिवर्तन और नवाचार का वाहक हो सकता था, उसी को पहचान के सबसे तीखे संघर्षों का वाहक बना दिया गया है। उसकी जो ऊर्जा रचनात्मक दिशा में जा सकती थी, उसे ध्रुवीकरण के निमित्त नियोजित कर दिया गया है।

यही द्वंद्व और टकराहट भाषाओं के मामले में भी देखी जा सकती है। एक तरफ तो इस डिजिटल समय में जब सारी दुनिया एक वैश्विक गांव में बदल चुकी है, हिंदी, अंग्रेज़ी और अन्य अनेक भाषाएं एक दूसरी में घुलती-मिलती जा रही हैं वहीं दूसरी तरफ हमारे यहां भाषा की शुद्धता का आग्रह बढ़ता जा रहा है। हिंदी है तो वह पूरी तरह संस्कृतनिष्ठ ही हो, उसमें उर्दू का तो एक भी शब्द न आए – यह प्रवृत्ति बहुत मुखर है। सवाल यह है कि भाषा को उसके स्वाभाविक रूप में परिवर्तित और विकसित होने दिया जाए या उसे एक कठोर सांचे में ढाल कर जड़ बना दिया जाए! अगर संस्कृति के संरक्षण का अर्थ इस तरह उसके उपादानों को जड़ बना देना मान लेंगे तो इससे संस्कृति विकसित न होकर संकुचित ही होगी।

आज के भारत में मीडिया और ख़ास तौर पर सोशल मीडिया की भूमिका भी बहुत विचारणीय है। भारत में 80 करोड़ से ज़्यादा इण्टरनेट उपयोगकर्ता हैं, और इस तरह भारतीय समाज दुनिया के सबसे विशाल डिजिटल समाजों में शामिल है। जब इतनी बड़ी जन संख्या अपनी-अपनी पहचानों के साथ एक ही मंच पर उपस्थित होती है जितनी सम्भावना उनमें पारस्परिक संवाद की होती है उतनी ही, या उससे कुछ ज़्यादा आशंका टकराव की भी उत्पन्न होती है। तकनीक के जानकार बताते हैं कि एल्गोरिद्म आधारित प्लेटफॉर्म्स पर वही सामग्री ज़्यादा फैलती है जो भावनात्मक और विवादास्पद होती है। इसकी परिणति पहचान आधारित ध्रुवीकरण के तज़ होने में होती है। चर्चा का हर मुद्दा पक्ष और विपक्ष के दायरों में सिमट जाता है और वह साझी ज़मीन जिस पर दोनों टिक सकते हैं संकुचित होते-होते अदृश्य ही हो जाती है।

राजनीति के इलाके में तो इस पहचान की तीव्रता और अधिक स्पष्ट है। चुनावी राजनीति में जाति, धर्म और क्षेत्रीय अस्मिताएं अधिक प्रभावी हुई हैं। संस्कृति तो यहां प्राय: एक प्रतीकात्मक आवरण के रूप में नज़र आती है। आज की राजनीति में संस्कृति का इस्तेमाल ही होता है; उसका संरक्षण करने को कोई तत्पर नज़र नहीं आता है। और यही वह बिंदु है जहां से संस्कृति का असल पतन शुरू होता है। फिर भी, मैं यह कहने में संकोच करूंगा कि हमारे यहां पहचान की राजनीति पूरी तरह नकारात्मक है। इतिहास में अनेक ऐसे क्षण आए हैं जब हाशिये पर अवस्थित समूहों ने अपनी पहचान के आधार पर ही स्थान और सम्मान प्राप्त किया है। दलित आंदोलन, स्त्री आंदोलन और विविध क्षेत्रीय अस्मिताओं के संघर्षों ने भारतीय लोकतंत्र को अधिक समावेशी बनाया है। समस्या तो तब उत्पन्न होती है जब राजनीति समावेश की बजाय बहिष्कार के मार्ग पर चलने लगती है, जब अपनी पहचान को स्थापित करने के लिए दूसरों के अस्तित्व को नकारा जाने लगता है। ऐसे में पहचान अधिकार का साध्न न रहकर वर्चस्व स्थापन का औज़ार बन जाती है।

इस समूचे द्वंद्व से सर्वाधिक प्रभावित हो रही है भारत की युवा पीढ़ी। भारत की करीब पैंसठ प्रतिशत आबादी पैंतीस वर्ष से कम आयु वाली है और यही समूह सोशल मीडिया और समकालीन विमर्श से सबसे अधिक प्रभावित है। जो युवा परिवर्तन और नवाचार का वाहक हो सकता था, उसी को पहचान के सबसे तीखे संघर्षों का वाहक बना दिया गया है। उसकी जो ऊर्जा रचनात्मक दिशा में जा सकती थी, उसे ध्रुवीकरण के निमित्त नियोजित कर दिया गया है।

ऐसे में सबसे बड़ी चुनौती यही है कि संस्कृति को उसके वास्तविक रूप में समझा और अंगीकार किया जाए। संस्कृति किसी एक पहचान, एक भाषा या एक परंपरा का नाम है ही नहीं। वह तो इन सबके बीच निरंतर चलते रहने वाले संवाद की परिणति है। उसे स्थिर करने का प्रयास उसे सीमित कर देना है। हमारी चिंता केवल संस्कृति और पहचान की नहीं, भारत के भविष्य की भी है। अगर संस्कृति की पहचान को संकीर्ण चौखटों में कैद कर दिया गया तो हम एक ऐसे समाज की तरफ बढ़ेंगे जहां विविधता समस्या बन जाएगी। यह वह भारत नहीं होगा जिसकी कल्पना हमारे स्वाधीनता सेनानियों ने की थी और न यह वह भारत होगा जिसे हमारा संविधान रेखांकित करता है। अगर संस्कृति को बचाने के नाम पर हम उसे भय, संदेह और बहिष्कार का औज़ार बना देंगे तो इतिहास हमें क्षमा नहीं करेगा।

–अतिथि संपादक,
डॉ. दुर्गाप्रसाद अग्रवाल,
(शिक्षाविद और साहित्यकार)

मैंने अपनी आँखों से घर टूटते देखे हैं – कानून, अदालत और चुपचाप मरते पुरुषों की कहानी

सुनील दत्त गोयल

मैं पिछले कुछ वर्षों से एक दर्दनाक सच्चाई को करीब से देख रहा हूँ। अख़बारों में खबरें आती हैं, सोशल मीडिया पर वीडियो चलते हैं, लेकिन असली कहानी उन घरों के भीतर लिखी जाती है जहाँ एक पति, उसका बूढ़ा पिता, उसकी माँ, उसकी बहन – सब एक साथ अदालत के कटघरे में खड़े कर दिए जाते हैं।

मैं यह नहीं कह रहा कि महिलाओं के खिलाफ अपराध नहीं होते। होते हैं, और बहुत गंभीर होते हैं। दहेज, घरेलू हिंसा, मानसिक उत्पीड़न – ये सब हमारे समाज की कड़वी सच्चाई हैं। लेकिन मैं यह पूछना चाहता हूँ – क्या हर मामला वैसा ही होता है? क्या हर 498ए का केस सच में क्रूरता का मामला होता है? और यदि नहीं, तो उन निर्दोष लोगों का क्या, जिनका जीवन सिर्फ एक शिकायत से बर्बाद हो जाता है?

एक एफआइआर... और पूरा परिवार अपराधी

भारतीय दंड संहिता की धारा 498ए, 1983 में जोड़ी गई थी। उद्देश्य था – दहेज और क्रूरता से महिलाओं की रक्षा। लेकिन व्यवहार में मैंने ऐसे अनेक मामले देखे हैं जहाँ:–

पति के साथ-साथ 70 साल की माँ भी आरोपी, शहर से बाहर रहने वाली विवाहित बहन भी आरोपी, यहां तक कि दूर के रिश्तेदार भी नामजद।

एक एफआइआर दर्ज होते ही पूरा परिवार अपराधी की तरह देखा जाता है। पुलिस की पूछताछ, गिरफ्तारी का भय, पासपोर्ट जब्त, नौकरी पर असर – ये सब शुरू हो जाता है। सुप्रीम कोर्ट ने स्वयं कई फैसलों में कहा है कि 498ए का रूटीन गिरफ्तारी के लिए इस्तेमाल नहीं होना चाहिए। अदालत ने ठस्लेलेठ पर चिंता जताई है और कहा कि बढ़ा-चढ़ाकर शिकायतें दर्ज की जाती हैं। अभियोजन विभाग की हालिया रिपोर्ट के अनुसार महिला उत्पीड़न से जुड़े मामलों में सजा का प्रतिशत लगातार गिरता हुआ दिखाई देता है, जो कानून के प्रभावी क्रियान्वयन पर गंभीर सवाल खड़े करता है। वर्ष दर वर्ष आंकड़ों पर नजर डालें तो नवंबर 2021 तक सजा दर 22.21%, अक्टूबर 2022 तक 22.33%, इसके बाद गिरकर अक्टूबर 2023 में 19.52%, दिसंबर 2024 में 19.21% और अंतत: अक्टूबर 2025 तक मात्र 16.44 % रह गई। यानी समय के साथ दोषसिद्धि दर घटती जा रही है, जबकि बड़ी संख्या में आरोपी अदालतों से बरी हो रहे हैं। यह प्रवृत्ति संकेत देती है कि या तो जांच और साक्ष्य संठाहण में गंभीर खामियां हैं, या फिर कुछ मामलों में कानूनों के दुरुपयोग की आशंका भी मौजूद है। एनसीआरबी के आंकड़ों के अनुसार 498ए में चार्जशीट दाखिल दर बहुत अधिक है, लेकिन दोषसिद्धि दर लगभग 14-16% के बीच रहती है। इसका मतलब यह नहीं कि 84% मामले झूठे हैं। पर यह जरूर दर्शाता है कि बड़ी संख्या में मामलों में आरोप अंतत: साबित नहीं हो पाते। लेकिन तब तक आरोपी परिवार 5-10 साल अदालतों में झूल चुका होता है।

जब कोई महिला किसी भी वजह से आत्महत्या कर ले या कोई उत्पीड़न का केस दर्ज कर देती है, तो उसे गाँव, शहर या राज्य की दर्जनों महिला संगठन और स्वयंसेवी संस्थाएँ पुरुष पक्ष के लोगों को प्रताड़ित करना शुरू कर देती हैं। उसके घर के आगे या ऑफिस के बाहर प्रदर्शन करना और उन्हें तरह-तरह से ब्लैकमेल करना शुरू कर देती हैं। लेकिन क्या कभी पुरुष की आत्महत्या के लिए कोई पुरुष संगठन ऐसा करते हुए आपने सुना है?

वह बेंगलुरु में सिंघानिया वाला केस, जिसने अपना गूगल ड्राइव पर लाइव रिकॉर्डिंग करके और सुसाइड नोट लिखकर आत्महत्या की – क्या उस पर कुछ एक्शन हुआ? क्या वह दोबारा अख़बारों में भी आया, उसके बारे में?

आत्महत्या के भयावह आँकड़े – जो हमें झकझोरने चाहिए

एनसीआरबी की "Accidental Deaths & Suicides in India" रिपोर्ट के अनुसार:–

हर साल आत्महत्या करने वालों में लगभग 70 % पुरुष होते हैं। विवाहित पुरुषों की आत्महत्या संख्या विवाहित महिलाओं से काफी अधिक पाई गई है। पारिवारिक समस्याएँ और वैवाहिक विवाद प्रमुख कारणों में दर्ज हैं। 2022 और 2023 के आंकड़े दिखाते हैं कि 1.6 लाख से अधिक आत्महत्याओं में से लगभग 1 लाख से अधिक पुरुष थे। इनमें बड़ी संख्या विवाहित पुरुषों की थी। मैंने ऐसे परिवार देखे हैं जहाँ पति ने सुसाइड नोट में लिखा – मैं निर्दोष हूँ, लेकिन केस और बदनामी सह नहीं पा रहा। मैंने ऐसे बुजुर्ग पिता देखे हैं जो कहते हैं – हम अदालत में साबित हो गए कि बेटा निर्दोष था, पर वह फैसला सुनने के लिए जीवित नहीं रहा। हर आत्महत्या सिर्फ एक व्यक्ति की मौत नहीं होती। वह एक परिवार की सामाजिक मृत्यु होती है।

घरेलू हिंसा अधिनियम – लेकिन पुरुष कहाँ जाए?

"The Protection of Women from Domestic Violence Act, 2005" ने महिलाओं को सुरक्षा, निवास अधिकार, भरण-पोषण जैसे कई महत्वपूर्ण अधिकार दिए। लेकिन यदि कोई पुरुष मानसिक या शारीरिक हिंसा का शिकार होता है, उसके लिए कोई समानांतर ढांचा नहीं है।

भारत में राष्ट्रीय महिला आयोग है। राज्य महिला आयोग हैं। लेकिन राष्ट्रीय स्तर पर पुरुष आयोग नहीं है। मैं यह नहीं कहता कि महिला आयोग की आवश्यकता नहीं है। लेकिन क्या न्याय व्यवस्था में संतुलन नहीं होना चाहिए? क्या पुरुषों की शिकायतों के लिए संस्थागत मंच नहीं होना चाहिए?

पहचान की असमानता – सामाजिक सज़ा पहले, अदालत बाद में कानून के तहत महिला पीड़िता की पहचान छिपाई जाती है – यह सही है और होना भी चाहिए। लेकिन मैंने देखा है कि पुरुष आरोपी का नाम, फोटो, पेशा, पूरा विवरण मीडिया में छप जाता है। बाद में यदि वह बरी हो जाए, तो क्या मीडिया उसी प्रमुखता से उसकी बेगुनाही प्रकाशित करती है? प्रतिष्ठा एक बार धूमिल हो जाए, तो जीवन भर दाग रहता है। एक और बड़ी अजीब सी दुर्गति मुझे कानून की नज़र आती है कि जब भी महिला उत्पीड़न का कोई केस होता है, तो उसकी सुनवाई के लिए केवल महिला न्यायिक अधिकारी को ही लगाया जाता है – चाहे वह लोअर कोर्ट हो या हाई कोर्ट। तो क्या उच्च न्यायालय के अधिकारी यह समझते हैं कि महिला को न्याय सिर्फ महिला ही दे सकती है? क्या यह एक तरफ़ा और एक तरीके से लैंगिक असमानता नहीं है? क्या उन्हें अपने पुरुष जजों या पुरुष न्यायिक अधिकारियों पर भरोसा नहीं है, जो ऐसा मानते हैं कि पुरुष तो शुरू से ही निकम्मा है और उसी की गलती है? इसलिए महिला जज ही लगाई जाए और वह कड़ी सज़ा करेगी। यह दोगलापन है, यह लैंगिक असमानता है, और जब तक यह समाप्त नहीं होगी, आने वाले समय में ऐसा न होकर रिश्तों में खटास पैदा हो जाएगी।

मैरिटल रेप और वैवाहिक निजता : मैरिटल रेप पर चल रही बहस अत्यंत संवेदनशील है। एक ओर महिला की गरिमा और सहमति का प्रश्न है, दूसरी ओर वैवाहिक संबंधों का निजी क्षेत्र। मैंने मैरिटल रेप के बारे में आजकल बड़े-बड़े जजमेंट पढ़े हैं। कोर्ट या अदालत यह तय करेगी कि कल रात पति-पत्नी के बीच संबंध बने थे या नहीं? यदि पत्नी की इच्छा नहीं थी और पति ने उसे संभोग के लिए मजबूर किया, तो उसने कौन-सा गुनाह कर दिया? शादी के समय भी वह साथ रहने के वादे करके आई थी। और मान लीजिए कभी पति की इच्छा न हो और पत्नी ज़बरदस्ती करे, तब की स्थिति में पत्नी कहाँ जाएगी? और उस वक़्त कोन से क़ानून की धाराएँ किसके खिलाफ लगाई जाएँगी। इन कानूनों में एकतरफ़ा व्यवस्था है। कानून के इस स्वरूप से डर लगने लगा है। आजकल शादियाँ बहुत जल्दी टूट रही हैं, और मुझे ऐसा लगता है कि इन एकतरफा कानूनों का भी कहीं न कहीं बड़ा योगदान साबित होता जा रहा है। यदि भविष्य में इसे अपराध घोषित किया जाता है, तो यह सुनिश्चित करना होगा कि स्पष्ट परिभाषा, प्रमाण मानक और दुरुपयोग रोकने की ठोस प्रक्रिया हो। अन्यथा हर वैवाहिक विवाद संभावित आपराधिक मुकदमे में बदल सकता है।

तलाक प्रक्रिया – जीवन का दशक अदालत में

भारत में तलाक के मामले 5-10 वर्ष तक चल सकते हैं। इस दौरान:

भरण-पोषण के आदेश

498A, DV Act, 406 IPC जैसे समानांतर केस

पासपोर्ट, प्रमोशन, विदेश अवसरों पर असर

दोनों पक्षों का जीवन रुक जाता है। लेकिन पुरुष अक्सर आर्थिक और कानूनी दबाव के दोहरे बोझ में फंस जाता है। मेरा तो प्रत्येक लड़के वालों को सुझाव है की स्वयं वधु या उनके परिवार की नौकरी चाहे सरकारी हो या गैर सरकारी या प्राइवेट नौकरी या व्यापारिक परिवार से हों, जब वधू पक्ष के लोग इस तरह का मुकदमा फाइल करते हैं, तो दहेज में बेशुमार रकम देना दिखा देते हैं, जबकि उनकी आर्थिक स्थिति और आयकर विवरणी/दस्तावेज किसी भी तरह से इस बात को साबित नहीं करती।

मेरा तो सरकार को, पुलिस वालों को और समस्त लड़के वालों को भी सुझाव है कि जब भी कभी इस तरह का कोई केस फाइल हो, तो आयकर विभाग में ज़रूर शिकायत करें, विजिलेंस डिपार्टमेंट, उनके संबंधित सरकारी विभाग और भ्रष्टाचार निरोधक विभाग में अवश्य शिकायत करनी चाहिए, जिससे यह पता चल सके कि वह इतनी संपत्ति लाए कहाँ से। आख़िर जो दावा कर रहे हैं, उसे साबित तो करना पड़ेगा कि उनके पास उतने आय के साधन थे भी या नहीं।

लिव-इन रिलेशनशिप: संस्कृति बनाम संवैधानिक स्वतंत्रता

मैं यह बात खुलकर कहता हूँ – भारतीय समाज की परंपरागत संरचना विवाह संस्था पर आधारित रही है। यहाँ परिवार केवल दो व्यक्तियों का निजी अनुबंध नहीं, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक इकाई है। लिव-इन रिलेशनशिप को हमारे पारंपरिक मूल्य कभी स्वीकार नहीं करते रहे। हमारे यहाँ विवाह केवल सहमति नहीं, संस्कार है। लेकिन समय के साथ न्यायपालिका ने व्यक्तिगत स्वतंत्रता को सर्वोपरि माना है।

Supreme Court of India ने कई फैसलों में स्पष्ट किया कि सहमति से वयस्कों का साथ रहना अपराध नहीं है और यह संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत जीवन और स्वतंत्रता का हिस्सा है।

पूर्व मुख्य न्यायाधीश D. Y. Chandrachud ने व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर जोर देते हुए कहा था कि अदालतें सामाजिक नैतिकता के आधार पर वयस्कों की पसंद में हस्तक्षेप नहीं कर सकतीं। न्यायालय ने यह भी माना कि यदि संबंध विवाह जैसे स्वरूप का हो तो महिला को घरेलू हिंसा अधिनियम के तहत संरक्षण मिल सकता है। यहाँ मेरा प्रश्न न्यायपालिका की नीयत पर नहीं, बल्कि सामाजिक दुष्प्रभाव पर है।

क्या समाज इस परिवर्तन के लिए तैयार है? क्या हम विवाह संस्था को कमजोर कर रहे हैं? क्या हर असफल लिव-इन संबंध अंतत: आपराधिक मुकदमे में बदलेगा? संविधान व्यक्तिगत स्वतंत्रता तो देता है, लेकिन देश और सामाजिक समरसता का ताना बाना ध्वस्त करने की आज्ञा नहीं देता।

लिव-इन रिलेशनशिप और आपराधिक मुकदमे

सुप्रीम कोर्ट ने स्पष्ट किया है कि सहमति से वयस्कों का साथ रहना अपराध नहीं है। लेकिन जमीनी स्तर पर देखा गया है कि:–

रिश्ता टूटने पर 376 (झूठा वादा), 417 (धोखाधड़ी), 498ए जैसे आरोप लगाए जाते हैं। मैं फिर दोहराता हूँ – वास्तविक धोखा और शोषण के मामलों में कठोर कार्रवाई होनी चाहिए। लेकिन यदि दो वयस्कों का सहमति से रिश्ता था, तो हर असफल प्रेम कहानी को आपराधिक मुकदमे में बदल देना न्याय का विस्तार नहीं, उसका विकृतिकरण है।

शादी का झूठा वादा और बलात्कार के मुकदमे

पिछले कई वर्षों में आइपीसी की धारा 376 के तहत शादी के झूठे वादे के आधार पर बलात्कार के मामलों में वृद्धि देखी गई है। सुप्रीम कोर्ट और विभिन्न उच्च न्यायालयों ने कई फैसलों में यह स्पष्ट किया है कि:–यदि शुरू से ही विवाह का इरादा धोखा देने का था, तो यह अपराध हो सकता है। लेकिन यदि दो वयस्कों के बीच सहमति से संबंध थे और बाद में किसी कारण विवाह नहीं हुआ, तो हर मामला स्वत: बलात्कार नहीं बन जाता। मैंने ऐसे मामले देखे हैं जहाँ वर्षों तक संबंध रहा, परिवारों को जानकारी थी, फिर रिश्ता टूट गया – और बाद में गंभीर आपराधिक आरोप लगाए गए। जब तक अदालत तय करे कि मामला वास्तविक था या नहीं, आरोपी की सामाजिक मृत्यु हो चुकी होती है।

विकसित देशों से क्या सीखें?

अमेरिका, ब्रिटेन, ऑस्ट्रेलिया जैसे देशों में घरेलू हिंसा कानून प्राय: जेंडर-न्यूट्रल हैं।

घरेलू हिंसा कानून जेंडर-न्यूट्रल

झूठी शिकायत पर स्पष्ट दंड

गिरफ्तारी से पहले जांच

तलाक मामलों में समयसीमा

मानसिक स्वास्थ्य सहायता तंत्र

भारत को भी सुधार पर विचार करना चाहिए:–

1. जेंडर-न्यूट्रल कानून
2. एफआइआर से पहले अनिवार्य प्रारंभिक जांच
3. झूठे मामलों में त्वरित दंड
4. पुरुष आयोग की स्थापना
5. पहचान गोपनीयता में समानता
6. तलाक और पारिवारिक मामलों की समयबद्ध सुनवाई

मेरी व्यक्तिगत अपील

आज मीडिया, बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ, बड़े तबके का समाज और शिक्षण संस्थाओं ने नारी को इतना अति-आत्मविश्वास से भर दिया है कि उन्होंने अपने विवेक के बजाय दूसरों की बातों से फैसले लेना शुरू कर दिया है, और पुरुष को इन सभी सिस्टम में विलेन के रूप में घोषित कर दिया गया है।

यह पूरा तबका यह भूल गया है कि ईश्वर ने चाहे स्त्रीलिंग हो या पुल्लिंग – दोनों को एक साथ, अपनी-अपनी अलग-अलग कला और विशेषज्ञताओं के साथ गढ़ा है।

जब तक इन दोनों विशेषज्ञताओं का समागम नहीं होता, तब तक एक सुदृढ़ समाज का निर्माण भी नहीं होता।

यदि दोनों पहियों में असंतुलन हो जाएगा – जिसकी शुरुआत मेरे ख्याल से हो चुकी है – तो उसके दुष्परिणाम सामने आ रहे हैं, और आने वाले 10-15 वर्षों में इन दुष्परिणामों की प्रतिशत में भारी वृद्धि होगी।

भारतीय परिवारों में विखंडन बहुत तेज़ी से होगा। इसके लिए मैं पुरुषों से ज़्यादा महिलाओं को जिम्मेदार मानता हूँ, क्योंकि वे स्वयं को सुपर पावर, सुपर टैलेंटेड समझने लगी हैं।

मैं महिलाओं से क्षमा चाहता हूँ कि यह बात लिख रहा हूँ, लेकिन मेरी नीयत और उद्देश्य गलत नहीं है। मैं जिस तरह से परिवारों का विखंडन हो रहा है, उसे लेकर चिंतित हूँ। अति-आत्मविश्वास की वजह से वे अपने परिवारों को खो रही हैं। उनके भीतर समझौते की कोई स्थिति नहीं बची है।

मैंने अपने जीवनकाल में ऐसे बड़े घरों को देखा है, जिनमें वरिष्ठ प्रशासनिक, न्यायिक अधिकारी या राजनेता रहे हैं। उनकी नौकरी के दौरान इस तरह की घटनाएँ जब घटती हैं, तो वे स्वयं डर के कारण कुछ कार्रवाई नहीं कर पाते। और उनके घर में आई हुई बहू या पत्नी का अत्याचार वह पुरुष या वह पूरा परिवार बेदर्दी से मजबूरन सहन करता है।

मैं जयपुर के बारे में इतना जानता हूँ कि लगभग 200 तलाक के केस जयपुर ज़िले में रोज़ाना फाइल होते हैं। यह अपने आप में प्रमाण है कि किस कदर ज़िंदगी बर्बाद हो रही है।

इसके लिए दोनों ही वर्ग जिम्मेदार हैं – एक अति सहनशीलता की वजह से और दूसरा अति-अहंकार की वजह से। आज कई निर्दोष पुरुष अदालतों में खड़े हैं, उनके बूढ़े माता-पिता थानों के चक्कर लगा रहे हैं, बच्चे मनोवैज्ञानिक आघात झेल रहे हैं। और कुछ पुरुष – चुपचाप, बिना शोर – अपनी जान दे रहे हैं। क्या हम तब जागेंगे जब आँकड़े और बढ़ेंगे? या हम अभी कानूनों की समीक्षा, संतुलन और सुधार की दिशा में कदम उठाएँगे?

न्याय एकतरफा नहीं हो सकता।

कानून सुरक्षा दे, भय नहीं।

और यदि कहीं संतुलन बिगड़ा है, तो उसे ठीक करना ही लोकतंत्र की परिपक्वता है।

–रोटेरियन सुनील दत्त गोयल,
एडवाइजर, एडिटर्स क्लब ऑफ़ इंडिया
महानिदेशक, इम्पीरियल चैंबर ऑफ़ कॉमर्स एंड इंडस्ट्री।

अप्रैल से फिर जम्मू तक दौड़ेगी भगत की कोठी-जम्मूतवी एक्सप्रेस

जोधपुर, (कासं)। गर्मी की छुट्टियों से पहले यात्रियों के लिए राहत भरी खबर है। उत्तर पश्चिम रेलवे ने भगत की कोठी-जम्मूतवी एक्सप्रेस को 1 अप्रैल से पुन: अपने पूर्ण मार्ग पर संचालित करने का निर्णय लिया है, जिससे जोधपुर से जम्मू जाने वाले यात्रियों को बड़ी सुविधा मिलेगी।

जोधपुर मंडल के सीनियर डीसीएम हितेश यादव ने बताया कि पिछले वर्ष भारी बारिश के कारण ब्रिज संख्या-17 में आई तकनीकी खराबी के चलते ट्रेन संख्या 14803/14804 भगत की कोठी-जम्मूतवी-भगत की कोठी एक्सप्रेस को पठानकोट रेलवे स्टेशन से जम्मूतवी रेलवे स्टेशनों के बीच आंशिक रूप से रद्द करना पड़ा था। अब कठुआ-माधोपुर रेलखंड पर मरम्मत और तकनीकी कार्य लगभग पूरा हो चुका है। इसके बाद रेलवे ने ट्रेन को फिर से पूरे मार्ग पर चलाने का फैसला किया है। इसके तहत ट्रेन संख्या 14803 भगत की कोठी-जम्मूतवी एक्सप्रेस 1 अप्रैल से तथा 14804 जम्मूतवी-भगत की कोठी एक्सप्रेस 2 अप्रैल से संचालित होगी। इसके लिए अग्रिम आरक्षण भी शुरू कर दिया गया है। वहीं ट्रेनों में अतिरिक्त यात्री भार को ध्यान में रखते हुए रेलवे द्वारा यात्रियों को राहत देने के लिए जोधपुर-रामदेवरा-भगत की कोठी के बीच चलाई जा रही स्पेशल ट्रेन 26 मार्च तक चलेगी।

उत्तर पश्चिम रेलवे के जोधपुर डीआरएम अनुराग त्रिपाठी के अनुसार,ट्रेन संख्या 04867, जोधपुर-रामदेवरा स्पेशल 19 मार्च से 26 मार्च तक (कुल 8 ट्रिप) संचालित की जा रही है। यह ट्रेन जोधपुर से सुबह 09.30 बजे रवाना होकर दोपहर 1 बजे रामदेवरा पहुंच रही है। इसी प्रकार ट्रेन संख्या 04868,रामदेवरा-भगत की कोठी स्पेशल भी 26 मार्च तक चलेगी,जो रामदेवरा से दोपहर 2 बजे रवाना होकर शाम 5.30 बजे भगत की कोठी पहुंच रही है। ट्रेन का मार्ग में जोधपुर, राईका बाग, मंडोर, मारवाड़ मथानियां, ओसियां, मारवाड़ लोहावट और फलोदी स्टेशनों पर ठहराव है जिसमें 8 साधारण श्रेणी,2 गार्ड डिब्बों सहित कुल 10 कोच लगाए गए हैं।

राशिफल

पंडित अनिल शर्मा

सोमवार 23 मार्च, 2026

चैत्र मास, शुक्ल पक्ष, पंचमी तिथि, सोमवार, विक्रम संवत 2083, कृत्तिका नक्षत्र रात्रि 8:50 तक, विष्कुम्भ योग दिन 12:22 तक, बव करण प्रात: 7:58 तक, चन्द्रमा आज वृष राशि में संचार करेगा।

गृह स्थिति: सूर्य-मीन, चन्द्रमा-वृष, मंगल-कुम्भ, बुध-कुम्भ, गुरू-मिथुन, शुक्र-मीन, शनि-मीन, राहु-कुम्भ, केतु-सिंह

आज सर्वार्थ सिद्धि योग प्रात: 8:20 से सूर्योदय तक है। रवियोग और कुमार योग प्रात: 8:50 से आरम्भ होगा। आज श्री पंचमी, लक्ष्मी पंचमी, कल्पादि है।

श्रेष्ठ चौघड़िया: अमृत सूर्योदय से 8:02 तक, शुभ 9:33 से 11:03 तक, चर 2:04 से 3:34 तक, लाभ अमृत 3:44 से सूर्यास्त तक।

राहूकाल: 7:30 से 9:00 तक। सूर्योदय 6:32, सूर्यास्त 6:35

मेष – आर्थिक कारणों से अटके हुए कार्य बनने लगेंगे। संभावित धन प्राप्त होगा। व्यावसायिक कार्यों के लिए भागदौड़ रहेगी। नौकरीपेशा व्यक्तियों को अतिरिक्त जिम्मेदारी मिल सकती है।

वृष – मानसिक तनाव से राहत मिलेगी। मनोबल-आत्मविश्वास बढ़ेगा। महत्वपूर्ण कार्य योजना का क्रियान्वयन हो सकता है। आज व्यावसायिक/आर्थिक मामलों में उचित सफलता मिल सकती है।

मिथुन – आज समय अनर्गल कार्यों में खराब होगा। अनावश्यक धन खर्च हो सकता है। पारिवारिक कार्यों के कारण भागदौड़ रहेगी। आज मन में असंतोष बना रहेगा।

कर्क – आर्थिक/वित्तीय मामलों के लिए दिन अच्छा रहेगा। आय में वृद्धि होगी। व्यावसायिक मामलों में लापरवाही आज ठीक नहीं रहेगी। आज धार्मिक कार्यों में भाग ले सकते हैं।

सिंह – व्यावसायिक कार्यों को प्राथमिकता से करने का प्रयास करें। व्यावसायिक कार्य शीघ्रता/सुगमता से बनने लगेंगे। नवीन कार्य योजना का क्रियान्वयन होगा। आर्थिक स्थिति ठीक रहेगी।

कन्या – नवीन कार्यों के संबंध में [illegible] आश्वासन/संदेश प्राप्त होंगे। अटके हुए कार्य बनने लगेंगे। धार्मिक स्थान की यात्रा संभव है। व्यावसायिक/आर्थिक स्थिति ठीक रहेगी।

तुला – व्यावसायिक परेशानियां अभी यथावत बनी रहेगी। आज व्यावसायिक कार्यों में विलम्ब हो सकता है। आज बनते कार्य बिगड़ सकते हैं। स्वास्थ्य संबंधित परेशानियां अभी बनी रहेगी।

वृश्चिक – परिवार में उत्सव जैसा माहौल रहेगा। परिवार में धार्मिक-मांगलिक कार्य सम्पन्न हो सकते हैं। व्यावसायिक कार्यों के संबंध में उचित सोच-विचार हो सकता है।

धनु – स्वास्थ्य संबंधित चिन्ता दूर होगी। अस्त-व्यस्त दिनचर्या में सुधार होगा। विवादित मामलों से राहत मिलेगी। व्यावसायिक प्रयासों में उचित सफलता मिलेगी। व्यावसायिक वार्ता सफल रहेगी।

मकर – परिवार में शुभ-मांगलिक कार्य सम्पन्न हो सकते हैं। आज महत्वपूर्ण कार्य योजना का क्रियान्वयन होगा। आज समय रचनात्मक कार्यों में व्यतीत होगा। व्यावसायिक वार्ता सफल रहेगी।

कुंभ – परिवार में सुख-शांति बनी रहेगी। सुख-सुविधाएं बढ़ेगी। परिवार में उत्सव जैसा माहौल रहेगा। व्यावसायिक कार्यों से संबंधित आर्थिक समस्या का समाधान हो सकता है।

मीन – परिवार में मन को प्रसन्न करने वाले संदेश प्राप्त होंगे। परिजनों के सहयोग से वर्तमान समस्या दूर हो सकती है। व्यावसायिक स्थिति ठीक रहेगी। आर्थिक स्थिति ठीक रहेगी।